अध्याय तेरवाँ

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढाय नमः॥

"भवसागर के पार लगाने वाले हे, सिद्धनाथजी, अनगिनत सुख देने वाले आप, मेरी मदद कीजिए। मुझे अभयदान देकर आपके हाथों मेरा उद्धार होने दीजिए। हे करुणामय माता, आपके चरण मैं कभी भी नहीं छोडूँगा।"

हे सिद्धारूढ़ भगवान आपकी जयजयकार हो। अस्तु। सभी अनाथों के आप पालनकर्ता हैं, मुमुक्षु जनों को मोक्षमार्ग दिखाकर आप अपनी कीर्ति सारे त्रिलोक में फैला रहे हैं। सब के उद्धार के लिए आप ही ने यह कथामृत रचा हुआ है, जिसे पढ़कर लोग भक्तिभावयुक्त हो जाते हैं तथा मोक्ष के मार्ग पर चलने लगते हैं। पिछले अध्याय में भीमप्पा ने पुत्र माँगते ही स्वयं सिद्धनाथजी उसका पुत्र होकर उसके घर जाकर लीलाएँ दिखाने की कथा बयान की थी। हुबली के बाजार में देवी के त्योहार के उपलक्ष्य में एक बहुत बडे रथ का निर्माण हो रहा था| परंतु त्योहार के दिन अचानक लोगों में कलह मच गया, जिससे रथ के त्योहार में बाधा आ गयी। उस समय त्योहार में शामिल होने वाले लोग, डुमगेरी में स्थित एक चबूतरे पर बैठे सिद्धनाथजी के पास आये और उन्हें प्रणाम करके बोले, "हे प्रभो, हमारी बिनती सुनिए। हमने नौ कलसों वाला एक अत्यंत मनोहर रथ तयार किया, परंतु उसमें किस भगवान की मूर्ति रखनी चाहिए इस बात को लेकर लोगों में कलह मच गया है। उसपर हमने एक उपाय किया है। हमने सब को कहा की जब आप जैसे महात्मा यहाँ उपस्थित हैं, तब आपकी तुलना में अन्य देवताएँ महत्वपूर्ण नहीं हैं, इसीलिए आपही सही में इस रथ पर सवार होने योग्य हैं। आपको रथ में बिठाने की बात सभी को स्वीकार होने के कारण हम यहाँ पधारे हैं। इसीलिए, हे सिद्धगुरुदेव, रथपर सँवार होकर हमारे आनंदपूर्ण समारोह में शामिल हो जाईए और हमारी आँखों को उस सुखसागर के दर्शन कराईए।" भक्तों की ये बातें सुनकर सिद्धजी मन ही मन बोले सचमुच ही प्रारब्ध की करनी भी अजीब है। लोगों ने सिद्धनाथजी को वस्त्र और आभूषण पहनाये, उन्हें रथ पर बिठाया और उनके नाम की जोरजोर से जयजयकार की। सिद्धजी ने सभी को 'कल्याणमस्तु' ऐसा आशिर्वाद देते ही, रथपर सवार हुयी सिद्धजी की छबि देखकर लोग अत्यंत हर्षित हुए। भक्तगणों ने सिद्धनाथजी को

रथपर बिठाकर जुलूस निकाला हुआ देखकर भीमप्पा की आनंद की कोई सीमा न रहने के कारण उसने घर में स्थित सोना बेचकर अपने घर आनंदोत्सव मनाया। उसने विनम्रता से लोगों को अपने घर आमंत्रित करके भोजन दिया और सिद्धनाथजी ने उसे आशिर्वाद देकर हर्षित किया। जब सिद्धनाथजी रथ पर सवार थे तब वे मन ही मन कह रहे थे की ये शरीर भी बहत्तर नाडियों से बना हुआ एक रथ ही है और उस पर सवार होकर जो सभी इंद्रियों को प्रेरणा देती है और नींद में आनंदमय होती है, वह आत्मा मैं स्वयं ही हूँ। रथोत्सव पूर्ण होते ही सिद्धारूढ़जी नीचे उतरें और पूर्ववत् डुमगेरी के चबूतरे पर जाकर बैठ गये| उसके पश्चात अनेक लोग आकर सतगुरुजी की पूजा करने लगे तथा अपार धन खर्च करके आनंदोत्सव मनाते और जेवनारों की व्यवस्था करते (ऐसे जेवनारों को 'समाराधना' कहते है)। जहाँ सिद्धनाथजी रहते, वहीं आकर भक्तगण उनकी पूजा तथा जेवनार की व्यवस्था करने आते थे। सिद्धजी के दो चहेते भक्त, करडगी मल्लप्पण्णा और शिरगुपी होंबंण्णा इन्होंने दो धर्मशालाओं का निर्माण किया, उसी प्रकार पेय जल के लिए एक कुएँ का निर्माण कराके उस परिसर में एक मनोहर सिद्धाश्रम की निर्मिती की। उसके पश्चात गर्मी का मौसम आ गया, उस समय भूख से कंगाल हुए सभी लोगों के लिए गुरु तथा भक्तों ने मिलकर भोजन की व्यवस्था की। उस समय सिद्धनाथजी उनके कार्य को आशिर्वाद देते हुए बोले, "आप लोगों ने दीन जनों को तृप्त करने के कारण हमें अति आनंद हुआ है, देवी अन्नपूर्णा की कृपा से तथा दीन जनों के आशिर्वाद से, देहांत के पश्चात फिर से मानव का जन्म प्राप्त हुए बिना आप मुक्त हो जायेंगे।" कार्तिक पूर्णिमा के दिन होंबंण्णा साहूकार ने सतगुरुजी को आनंदित करने के लिए गरीबों को आदरसहित अन्नजल दिया। उस दिन के आनंद का बयान कैसे करें! उसके पश्चात सभी साहूकारों ने मिलकर निर्णय किया की प्रतिवर्ष इसी प्रकार का उत्सव मनाना चाहिए; उस दिन प्रथम सतगुरुजी की मंडप में बिठाकर विधिवत पूजा तथा रथोत्सव का आयोजन करने के पश्चात समारोह में सभी लोगों के लिए अन्नदान करना चाहिए। कई वर्षों तक इस प्रकार समारोह का आयोजन किया गया। उसके पश्चात भक्तों ने सोचा की यही समारोह भगवान श्रीशिवजी को जो अत्यंत प्रिय है ऐसे महाशिवरात्री के दिन मनाना चाहिए। तब

से यह समारोह महाशिवरात्री के दिन मनाया जा रहा है, दूरदूर के प्रांतों से इस उत्सव का वैभव देखने हेतु लोग आते हैं। इस समारोह के सप्ताह में दिनरात आनंदमय जयजयकार के साथ लोग भजन तथा पंचाक्षरी मंत्र का जाप करते हैं। उस समय मंडप में सबसे उच्च स्थान पर बैठकर अमृत से भी श्रेष्ठ ऐसी वाणी में सतगुरुनाथजी स्वयं वेदांत शास्त्रों पर प्रवचन देते थे। उसके पश्चात भोजन का समारोह आरंभ होता था, जिसमें चारो वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र) के लोगों को, मुख्यत: गरीब तथा अनाथों को अन्नदान से तृप्त किया जाता था। समारोह के दिनों में दोपहर के समय कीर्तन होता था, उसी प्रकार कोई गायक गायन करता था या कोई आध्यात्मिक अधिकारी व्यक्ति आकर भक्ति तथा ज्ञान के बारे में व्याख्यान देती थी। शाम होते ही सिद्धनाथजी को दिव्य मंडप में बिठाकर उनकी अति वैभव के साथ पूजा करते थे, उस समय भक्तगण एक ही आवाज में मंत्रोच्चारण करते थे। इस प्रकार दिनभर समारोह मनाया जाता था, सातवे दिन एक अपूर्व जशन में सतगुरुजी को रथ पर बिठाकर बड़ी धूमधाम से उनका जुलूस निकाला जाता था। जिसने अनगिनत पुण्य किये हो, केवल उसी को यह समारोह देखने का सौभाग्य प्राप्त होता है और जो इस दिन सतगुरुजी के दर्शन करता है, वह इसी जन्म में मुक्त हो जाता है। जो शिष्यों के मन का दुख, ताप हरते हैं, जो उन्हें भवसागर के पार लगाते हैं, जो मुमुक्षुओं को पालन करते हैं, वे सिद्धनाथजी ज्ञानी जनों के नायक हैं। नदी का मूल (उद्‌गम स्थान) स्थान कही भी हो, जैसे वह सागर को ढूँढती हुई बहती रहती है, उसी प्रकार मुमुक्षु जन सिद्धनाथजी के चरणों में शांति प्राप्त होती है यह जानकर उन्हें ढूँढते हुए चले आते हैं। जो हमेशा सच्चिदानंद में तल्लीन रहते हैं, ऐसे सिद्धारूढ़ स्वामीजी सिद्धाश्रम में स्थिर हो गये। एक बार सांसारिक कष्टों से झुँझलाया हुआ एक सज्जन सोचने लगा की मेरे मन का यह ताप सतगुरुजी के बिना कौन दूर करेगा? उसी कारण सतगुरुजी की खोज में अनेक प्रांत घूमफिरकर आखिर सिद्धाश्रम की कीर्ति सुनकर वह शीघ्र उनके पास आया। दूर से ही सतगुरुजी को देखकर उसने बड़े विनम्र तथा दीन भाव से साष्टांग प्रणाम किया, फिर उनके समीप पहुँचकर अष्टसात्विक भाव से उनका स्तवन किया| "हे श्रीशिवमूर्ति गुरुनाथजी, मुझ जैसे दीन मनुष्य पर दया

कीजिए, हे अनाथबंधु, आप बिना परिश्रम के हृदय का ताप निवारण करने के काबिल हैं," ऐसी प्रार्थना करके हाथ जोड़कर वह खडा रहा। उस समय वह मनुष्य सचमुच ही आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने योग्य है या नहीं इसकी परीक्षा करने हेतु सिद्धनाथजी ने उदासीनता दिखाई। विवेक आदि अनेक उपासनाओं से संपन्न वह सज्जन मन ही मन समझ गया की वह अधिकारी न होने के कारण सतगुरुजी ने उदासीनता दिखाई है। उसने सोचा अगर रूप देखने के लिए आँखों की आवश्यकता है उसी प्रकार गुरुकृपा प्राप्ति के लिए गुरुसेवा भी उतनी ही आवश्यक है। ये जानकर उसने पूर्ण रूप से अपने शरीर का अभिमान त्यागकर गुरुसेवा करना आरंभ किया। उसके निश्चय में कितनी दृढता है, इसे आजमाने के लिए सिद्धनाथजी कभी कभी उसे अन्न तक नहीं देते थे। फिर भी वह पूर्णत: सद्भाव तथा तत्परता से गुरुसेवा करता था। उसके मन की स्थिरता देखकर सिद्धजी ने उसका नाम 'कबीर' नाम रखा। एक बार उसे बुलाकर अपने समीप बैठने को कहते ही वह सतगुरुजी चरणों में सिर रखकर उठकर खड़ा रहा। हाथ जोड़कर दीन भाव से खड़े हुए कबीरदास की दृढता की परीक्षा करने हेतु सिद्धजी ने उसे पूछा, "अगर ज्ञानप्राप्ति करने से मोक्ष प्राप्त होता है तो विवेक का होना ही काफी है, तब मुमुक्षु को अन्य उपासनाओं की क्या आवश्यकता हैं?" कबीरदास ने कहा, "महाराज, बिना वैराग्य के विवेक नहीं टिक पाता।" गुरुमहाराजजी ने कहा, "तो ये दो साधनाएँ काफी है?" शिष्य ने कहा, "शम (मनोनिग्रह), दम (आत्मसंयम), तितिक्षा (सहनशीलता, क्षमा), इन तीन साधनाओं की आवश्यकता है, क्योंकि उनके बगैर वैराग्य स्थिर नहीं रहता। इंद्रिय निग्रह करने से मन पर विजय प्राप्त होता है, इसका अर्थ शम को दम की सहायता होती है। इस प्रकार ये तीनों साधनाएँ एकदूसरे पर निर्भर हैं, इसलिए इन तीनों की आवश्यकता है।" ये सुनकर सतगुरुनाथजी ने सोचा की जैसे यह बोलता है उसी प्रकार यथार्थ में वह व्यवहार करता भी है या नहीं इसे आजमाना आवश्यक है। तब उन्होंने उसे पूछा, "हे समझदार शिष्य, सुन। ये सभी उपासनाएँ करते करते तुम्हें मृत्यु को स्वीकार करना होगा। उसकी अपेक्षा सुख के लिए तुम ये सभी उपासनाओं का त्याग कर दो, यहीं मैं तुम से कहूँगा। 'यामल' शास्त्र (एक प्रकार की तंत्रविद्या) में वशीकरण तथा दूसरों को आकर्षित

करने वाली सिद्धियों के बारे में जानकारी उपलब्ध है| तुम मेरे प्रिय शिष्य होने के कारण मैं तुम्हें कहता हूँ की अगर तुम ये सिद्धियाँ प्राप्त करोगे तो तुम्हें पेट भरने का साधन तथा शांति दोनों की निश्चित रूप से प्राप्ति होगी।" ये सुनकर कबीर ने कहा, "गुरुदेव, जो बातें आपने मुझे समझायी, वे इस मृत्युलोक में अल्प सुख देकर आखिर नरकवास की प्राप्ति के कारण होंगे, इसलिए मुझे ऐसे साधनाओं की आवश्यकता नहीं है।" उसपर गुरुजी ने कहा, "तो फिर तुम उत्तम सुखप्राप्ति के लिए मूर्तिपूजा या योगसाधना की उपासना कर, जिससे तुम्हें मरने के पश्चात उत्तम लोक की प्राप्ति होगी।" कबीरदास ने कहा, "हे गुरुवर्य, वेदों में कहा गया है की पुण्यकर्मों का क्षय होते ही, उत्तम लोक से फिर मृत्युलोक आना अनिवार्य है, इसलिए ये सारे उपाय मुझे पसंद नहीं है।" तब गुरुदेव ने कहा, "हे प्रिय शिष्य, सुन। इस मृत्युलोक में, जो साधारण मनुष्य के सुखप्राप्ति के साधन समझे जाते हैं, ऐसे विषयोपभोगों की प्राप्ति कर लो, क्यों इधर उधर व्यर्थ ही भटक रहे हो?" कबीर ने कहा, "गुरु महाराज, वेदों में एक निर्णायक वचन है की अमरत्व प्राप्ति के लिए, किये हुए कर्म, संतान अथवा इकट्ठा किया हुआ धन इनमें से किसी का भी उपयोग नहीं होता, केवल सर्वस्व का त्याग यही उपाय करना पड़ता है।" तब सतगुरुजी ने मन में सोचा की ये पूर्णत: कर्म का त्याग करके निश्चयपूर्वक यहाँ आया है, इसलिए ये ज्ञानप्राप्ति का अधिकारी है। सतगुरुनाथजी ने कबीर से कहा, "तुम्हारे मन में क्या है, यह मुझे निश्चित रूप से बताओ।" कबीर ने कहा, "सतगुरुनाथजी, आप ने मुझे आनंदित किया है। अब मेरे मन में जो संदेह है, उसका निरसन कीजिए। 'ईशावास्योपनिषद' (उपनिषदों को ही श्रुति कहते है। जिस दैवी ज्ञान के कारण जीवात्मा का भवबंधन टूट जाता है, अज्ञान का पूर्ण रूप से विनाश होता है और उसे ईश्वर प्राप्ति का मार्ग मिलता है ऐसे दैवी ज्ञान की चर्चा उपनिषदों में की गयी है। ऐसे दस उपनिषद हैं, उनमें ईशावास्योपनिषद सबसे प्रमुख माना जाता है) ये कर्म से संबंधित है या ज्ञान से, हे गुरुवर्य, आप मुझे ये विषद करके बताईए।" दयालु सतगुरुजी ने कहा, "ईशावास्योपनिषद ज्ञान से संबंधित है।" उन्होंने दिया विवरण सुनकर, संदेह दूर होने के कारण कबीर ने आनंदित होकर कहा, "आज मैं धन्य हो गया, मेरे पूर्वजन्म के पुण्य संचय के कारण, ये ज्ञानसूर्य

सिद्धारूढ़जी मुझे गुरु के रूप में मिल गये। अब मैं सतगुरुजी की कीर्ति का पूर्णत: वर्णन करूँगा, जो सुनकर लोगों का उद्धार होगा और यहीं मेरी उन्हें गुरुदक्षिणा होगी। हे गुरुनाथजी, इस कार्य के लिए आप मुझे आज्ञा दीजिए।" सतगुरुजी ने हर्षित होकर प्रेम से शिष्य को सहलाया, दोनों के आँखो से अविरत अश्रू बह रहे थे। उसपर सतगुरुनाथजी ने कहा, "मैं तुम्हारी मनोकामना पूर्ण करूँगा।" ऐसे ये कबीरदास महापुरुष, जिन्होंने इस ग्रंथ का कन्नड भाषा में पूर्वार्ध लिखा, वे सतगुरुमहाराज का दुलारा शिष्य था। गुरुनाथजी की आज्ञा से पूर्ण हुआ उनका जीवन चरित्र यहीं है, लिखने लिखाने वाले वे स्वयं ही हैं, मैं तो उनके चरणों के पास रहने वाला एक अज्ञानी पामर हूँ। यही पर ज्ञानपूर्ण गुरुमहाराजजी के जीवनचरित्र का पूर्वार्ध पूर्ण हुआ, जिसे सुनकर मुमुक्षुओं को ज्ञानप्राप्ति होगी, ऐसा वरदान स्वयं सिद्धनाथजी ने ही दिया है। गुरुमहाराज अनेक देशों में घूमफिरकर अनगिनत मुमुक्षुओं को योग्य मार्ग दिखाकर, अब हुबली में रहते हुए अनेक लोगों का उद्धार कर रहे हैं। इसके आगे इस ग्रंथ का सुरसपूर्ण उत्तरार्ध लिखा गया है, जिस में सतगुरुजी की महिमा का विस्तार से वर्णन किया है, वह आप श्रोतागण आराम से पढ़िए। अस्तु। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ़ कथामृत का मधुर सा यह तेरवाँ अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ़ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढ़चरणारविंदार्पणमस्तु ॥